संदर्भ ग्रंथ 146-147

भूमिका

स्ट्रिंगर यानि समाचार संगठनों के लिए अंशकालिक तौर पर काम करनेवाला पत्रकार। वैसा पत्रकार जिसका पारिश्रमिक उसके कार्य के मूल्यांकन के आधार पर किया जाता है। जिसका कोई नीयत वेतनमान नहीं होता। शुरू के दिनों में तो समाचारपत्रों में उन्हें प्रति इंच प्रकाशित होनेवाले खबरों के आधार पर भुगतान किया जाता था। आज भी उन्हें प्रति कॉलम के हिसाब से पारिश्रमिक दिया जाता है। फोटोग्राफर हो या संवाददाता, दोनों को ही कॉलम के आधार पर पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है। यदि शहरों से बाहर निकल कर देखें, तो समाचारपत्रों में पृष्ठ संख्या एक और तीन के बाद जो आंचलिक समाचार हमें देखने को मिलते हैं, वह पूरे तौर पर स्ट्रिंगरों के श्रम का ही प्रतिफल होता है। दूसरे शब्दों में कहें, तो ग्रामीण पत्रकारिता और आंचलिक पत्रकारिता इन्हीं स्ट्रिंगरों के सहारे चल रही है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पंचायत-प्रखंड-अनुमंडल से लेकर जिले के स्तर पर काम करनेवाले पत्रकारों का बड़ा समूह आज स्ट्रिंगर के दायरे में ही है। इन सभी को समाचार संगठन नियत वेतनमान पर नहीं रखते। इनको मिलने वाला पारिश्रमिक दिहाड़ी मजदूर से भी कम होता है । स्ट्रिंगर यदि किसी दिन कोई खबर नहीं भेजता तो उसे उस दिन कोई भुगतान नहीं होता है । इस मामले में इनकी स्थिति मनरेगा के मजदूरों से भी गई गुजरी है।

एक समय था, जब लोग अपना पेट काट कर पत्रकारिता में डटे रहते थे। उन्हें इस पेशे से कुछ पाने की उम्मीद नहीं होती थी। वे देश हित में काम करना चाहते थे। भारतीय पत्रकारिता के इतिहास पर नजर डालें, तब यह दृष्टिगोचर होता है कि स्वतंत्रता पूर्व एक ही व्यक्ति समाचार पत्र का रिपोर्टर, संपादक, प्रकाशक और मालिक सबों की भूमिका में होता था। कभी-कभी मालिक भी इसी भावना के साथ समाचार पत्र संगठन से जुड़ते थे। पयाम-ए-आजादी और स्वराज्य में संपादकों की भर्ती

के लिए निकलनेवाले विज्ञापनों को देख कर स्थिति का सहज आकलन किया जा सकता है। संपादक के लिए जो विज्ञापन निकलता था, उसका स्वरूप कुछ इस प्रकार होता था- पद संपादक, वेतनमान- दो सूखी रोटी, एक गिलास पानी और योग्यता-जेल जाने को हमेशा तैयार रहने की तत्परता।

वक्त बदला। यदि आजाद भारत की बात करें, तो वर्ष 1977 के पूर्व तक भारतीय पत्रकारिता कमोबेश उसी रास्ते पर चल रही थी। यह 1977 के आंदोलन में भी दिखा था। कई समाचार संगठनों के मालिकों पर मुकदमा किया गया। देश भर से पत्रकारों को गिरफ्तार किया गया। समाचार पत्र संस्थानों को फूंक दिया गया। इसके बाद भी सत्ताधारी संगठन को समाचार संगठन की ताकत का बखूबी अहसास हो गया। इसका नतीजा हुआ कि वे अब खुद समाचार संगठनों की दुनिया में पांव पसारने लगे। इसके पीछे उनका दोहरा मकसद था। एक तो अपने अनुकूल जनता के साथ संवाद हो सकेगा। अपनी बातें बढ़ा-चढ़ा कर प्रकाशित की जा सकेंगी और दूसरा इसकी आड़ में अपना अवैध धंधा फल फूल सकेगा। नतीजा हुआ कि उनके लिए समाचार संगठन केवल और केवल मुनाफे कमाने का जरिया बन गया। ऐसे में पत्रकारों की उपेक्षा होने लगी। संपादकों का स्थान प्रबंधकों ने ले लिया। अब प्रबंधकों की शर्तों पर उन्हें काम करने को मजबूर होना पड़ा। इस बदलाव का सबसे अधिक खामियाजा निचले स्तर के पत्रकारों और खास कर स्ट्रिंगरों को भुगतना पड़ा। वेतनमान के बदले अस्थाई तौर पर पत्रकारों की नियुक्ति होने लगी। काम के अनुसार उनका पारिश्रमिक तय होने लगा। मीडिया के स्ट्रिंगर आज भी कम मेहनताना में काम करने को विवश है। समाचार पत्रों की देखा देखी टीवी चैनलों ने भी इसका अनुकरण किया और बड़े शहरों के अलावा बाकी कवरेज के लिए स्ट्रिंगर की भर्ती को ही प्रमुखता देने लगे। यदि काम कम पैसे में ही हो जाए, तब कोई क्यों अधिक पैसे पर कर्मचारी की नियुक्ति करे। स्ट्रिंगरों के लिए चुनौतियां कुछ ऐसी ही हैं।